बाल-साहित्य-माला—६

स्वामी रामतीर्थ

—: और :—

उनके उपदेशोंका संग्रह

लेखकः—

ठा० राजबहादुर सिंह

सहायक सम्पादक 'सन्देश'

दूसरी बार] जुलाई १९३५ [मूल्य ३ आने

प्रकाशकः—
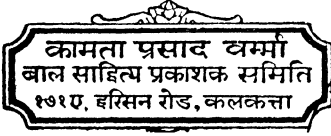
मुद्रकः—

उमादत्त शर्मा

'रत्नाकर-प्रेस'

११ ए, सैयद्साली लेन, कलकत्ता।

बाल-साहित्य-माला—१४

बच्चोंकी मिठाई

[लेखक—पं० सरयू प्रमाद पांडेय]

छोटे-छोटे बालक-बालिकाओंके लिये अति मधुर और शिक्षाप्रद पद्यमय कहानियोंका संग्रह। ऐसी उपदेश पूर्ण, शिक्षा-प्रद तथा मनोहर पद्यमय कहानियोंका संग्रह अभी तक हिन्दी साहित्यमें नहीं छपा है।

प्रत्येक कहानियां सचित्र तथा मोटे टाईप, मुन्दर चिकने कागजपर छापी गयी हैं। पुस्तकको देखकर ही लड़के मोहित हो जाते हैं।

पुस्तकको हाथमें लेते ही लड़के खानेवाली मिठाई छोड़कर इम 'मिठाई' का रस चखने लगेंगे। मूल्य ५ आने

कलकत्ता-पुस्तक-भण्डार,

१७१-ए, हरिसन रोड,

कलकत्ता

प्रकाशकका निवेदन

हिन्दी साहित्यमें बालकोपयोगी पुस्तकोंकी बड़ी कमी है। लेखकों तथा प्रकाशकोंको इधर ध्यान देना चाहिये। "बाल-साहित्य-माला" की पुस्तकोंका पाठकोंने आदर करके हमारे उत्साहको बहुत बढ़ाया है। उसीसे उत्साहित होकर यह 'स्वामी रामतीर्थ' का दूसरा संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है। आशा है पाठकवृन्द इसका भी वैसा ही आदर करेंगे। शीघ्र ही और भी कई अच्छी और सुन्दर पुस्तकें प्रकाशित होंगी।

भवदीय—

प्रकाशक
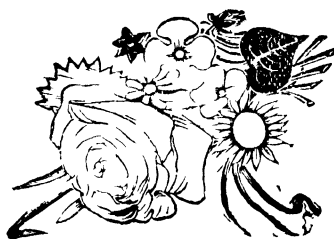
स्वामी रामतीर्थ

[१]

शिष्य—गुरुजी, श्रीरामकृष्ण परमहंसका हाल बतलाते हुए आपने कहा था कि उनके शिष्य स्वामी विवेकानन्दने अमेरिका जाकर हिन्दू-धर्मका प्रचार किया था। और इस प्रकार वहां भारतवर्षकी इज्जत बढ़ाई थी। क्या और भी कोई बड़ा महात्मा हुआ है, जिसने अमेरिका आदि देशोंमें जाकर हिन्दू-धर्मका प्रचार किया हो?

गुरु—हाँ, तुमने बड़ा अच्छा प्रश्न किया। अमेरिका जाकर सबसे पहले हिन्दू-धर्मका प्रचार करने और भारतका नाम प्रसिद्ध करनेवाले दो बड़े भारी महात्मा हो गये हैं, जिनमेंसे एक तो स्वामी विवेकानन्द थे और दूसरे स्वामी रामतीर्थ।

शिष्य—अच्छा, तो क्या कृपा करके आप स्वामी रामतीर्थके जीवनका कुछ हाल सुनायेंगे ?

गुरु—क्यों नहीं। पहले उनका वंश-परिचय सुनो—गोस्वामी ब्राह्मणके घरानेमें सन् १८७३ ई० में दीवालीके दूसरे दिन स्वामी रामतीर्थका जन्म हुआ था। इनका जन्म स्थान मुरलीवाला गांव पंजाबके गुजरांवाला जिलेमें है। जब ये कुछ ही दिनके हुए इनकी माताका देहान्त हो गया। इनका पालन-पोषण इनके बड़े भाई गोस्वामी गुरुदास और इनकी बूढ़ी मौसीने किया था। इनके बचपनमें ही एक ज्योतिषीने इन्हें देखकर कहा था कि यह लड़का बड़ा होकर एक असाधारण आदमी होगा। लड़कपनसे ही वे पुराण, महाभारत और भागवत बड़े ध्यानसे सुना करते थे। उसी समयसे ये जो कथाएं सुनते उनपर विचार करते और एक होशियार लड़केकी तरह सवाल-जवाब किया करते थे। उनके गांववाले अब भी उनके असाधारण ज्ञान और एकान्त चिन्तनकी कथा सुनाया करते हैं। जब वे पढ़नेके लिये स्कूल भेजे गये तो उनकी बुद्धिका पूरा परिचय मिला।

शिष्य—उन्होंने क्या-क्या विषय पढ़े थे ?

गुरु—पढ़े तो उन्होंने वैसे सभी विषय थे, पर गणित (हिसाब) में वे बहुत तेज थे। बी० ए० की परीक्षामें विश्वविद्यालय भरमें सर्वप्रथम पास हुए थे। गणितमें उनको बहुत अधिक नम्बर मिले थे और इसीको लेकर उन्होंने एम० ए० की परीक्षा पास की थी।

शिष्य—उन्होंने एम० ए० क्यों पास किया—क्या उनका नौकरी करनेका विचार था ?

गुरु—बेटा, एम० ए० की परीक्षा नौकरी करनेके लिये ही नहीं पास की जाती—परीक्षाएं तो ज्ञान प्राप्त करने और विद्वान बननेके लिये पास की जाती हैं। फिर पास करके कोई नौकरी भी करे तो कोई हर्ज नहीं।

शिष्य—पर स्वामी रामतीर्थने नौकरी की थी या नहीं ?

गुरु—हां, की थी। चूं कि वे गणित बहुत अच्छी तरह जानते थे, इसलिये लाहौरके फोरमैन क्रिश्चियन कालेजमें गणितके ही प्रोफेसर नियत हो गये थे, और दो वर्ष तक वहां प्रोफेसरीका काम करते रहे। कुछ दिनोंके

लिये लाहौर ओरियन्टल कालेजमें भी इन्होंने रीडरका काम किया था। विद्यार्थी अवस्थामें वे अपने अध्यापकोंके बड़े कृपापात्र थे। मि० डब्ल्यूबेल नामक अंग्रेजने जो गवर्नमेंट कालेजका प्रिन्सिपल था, इनकी बड़ी तारीफ की और इन्हें प्रान्तीय सिविल सर्विसकी परीक्षामें बैठनेको कहा, पर इनकी तो गणित पढ़ानेकी रुचि थी। उनका विचार सरकारी छात्रवृति (वजीफा) पर विलायत जाकर खास तौर पर गणित पढ़नेका था, पर ईश्वरको नहीं मंजूर था कि रामतीर्थ एक प्रधान गणितज्ञ ही बनकर रह जाय, इसलिये वह वजीफा इन्हें न मिलकर एक दूसरे विथार्थीको मिल गया, और ये बजाय विलायत जानेके सन् १९०० ई० में जङ्गलमें चले गये और एक सालके अन्दर ही संन्यासी हो गये।

शिष्य—संन्यासी होनेके बाद उन्होंने क्या किया?

गुरु—संन्यासी होनेके बाद कुछ दिन भारतमें रहकर, वे हिन्दू-धर्म-प्रचारके लिये अमेरिका चले गये।

---

[२]

शिष्य—क्या वे अमेरिका अकेले ही गये थे ?

गुरु—अकेले जानेमें उन्हें किस बातका डर था ? वे स्वभावसे ही ऐसे प्रसन्न और मिलनसार थे कि जहां कहीं वे जाते वहीं उनके मित्र पैदा हो जाते थे। जिस जहाज पर ये अमेरिका जा रहे थे उसपर अधिकतर जापानी और अमेरिकन लोग थे। सब इनके स्वभाव पर ऐसे मोहित हो गये कि हरेक जापानी इन्हें अपना आदमी समझने लगा और अमेरिकावाले अपना। जिन जापानियोंके यहां ये ठहरे थे, उन्हें बहुत दिनोंतक इनकी मीठी हँसीकी याद बनी रही।

शिष्य—अमेरिका जाकर स्वामी रामतीर्थने क्या किया ?

गुरु—उन्होंने अमेरिकाके बड़े-बड़े नगरों तथा छोटे-छोटे कस्बोंमें जाकर हिन्दू-धर्मकी विशेषतापर व्याख्यान दिये, जिससे वहांके बड़े-बड़े विद्वान् चकित हो गये और यह समझने लगे कि भारतमें भी कैसे-कैसे धुरन्धर विद्वान् और ज्ञानी पैदा होते हैं। इससे सबके मनमें हिन्दुस्तानकी

इज्जत बढ़ गयी, नहीं तो पहले अमेरिका वाले यह समझते थे कि हिन्दुस्तान जंगली आदमियोंका देश है। जहां पढ़े-लिखे और सभ्य आदमी रहते ही नहीं। वे मैले-कुचैले रहते हैं और उनके घरोंमें सांप लोटा करते हैं।

शिष्य—गुरुजी, ऐसी झूठी बातें अमेरिकावालोंको कैसे मालूम हुईं ?

गुरु—झूठी बातें अमेरिकावालोंको उनके देशवासी पादरी लोगोंने बतलायीं जो हिन्दुस्तानमें आकर ईसाई धर्मका प्रचार करते हैं।

शिष्य—ऐसी झूठी बातें उन्होंने क्यों कहीं ?

गुरु—ऐसी ही झूठी बातें बना-बनाकर पादरी लोग अमेरिकाके धनिकोंसे धर्म-प्रचारके बहाने पैसा ठगते थे और हिन्दुस्तानके लोगोंके अज्ञान तथा असभ्यताका चित्र खींचकर उनके मनमें दया उपजाते थे साथ ही रुपयेकी मददसे हिन्दुस्तानियोंको ईसाई बनाकर सभ्य बना देनेका दावा करते थे।

शिष्य—गुरुजी, क्या अब भी इन पादरियोंकी यह ठग-विद्या चलती है ?

गुरु—हां, अब भी चलती है क्योंकि अमेरिकामें भी आंख मूंदकर दान देनेवालोंकी कमी नहीं है, पर स्वामी रामतीर्थ और विवेकानन्दके जानेके बाद पादरी लोग अमेरिका वालोंको भारतके बारेमें उतने अन्धकारमें नहीं रख सके। इन दोनों संन्यासियोंके व्याख्यानोंने इतना काम किया जितना हजारों प्रचारक नहीं कर सकते थे।

शिष्य—गुरुजी, स्वामी रामतीर्थ अपने व्याख्यानोंमें क्या-क्या बातें कहा करते थे?

गुरु—बातें तो बहुत कुछ कहा करते थे, जिनका पूरा बयान यहां इस समय नहीं हो सकता, पर बहुधा इन विषयोंका वर्णन किया करते थेः—

(१) मनुष्यके अन्दर ईश्वरीय शक्ति मौजूद है।

(२) जो अपनेको संसारके साथ मिला हुआ समझता है, संसार अवश्य उससे सहयोग करता है।

(३) शरीरको कार्य और मनको शान्ति और प्रेममें लगाये रहनेसे इस जीवनके पापों और कष्टोंसे छुटकारा मिलता है।

(४) सबमें ईश्वरीय-सत्ता देखनेसे आदमी संसार

में निडर होकर जीवन बिता सकता है।

(५) संसारके सभी धर्म ग्रन्थोंको हमें वैसे ही समझना चाहिये जैसे कि रसायन शास्त्र आदि, खास-खास विषयोंको समझनेके लिये हम उस विषयकी पुस्तकें पढ़ते हैं—मतलब यह कि अन्तिम फैसला अपने अनुभवके ऊपर करना चाहिये।

शिष्य—उनकी बातोंका असर अमेरिकावालों पर क्यों पड़ा ?

गुरु—ऊपर जो बातें बतलायी हैं, इन्हीं पर स्वामी रामतीर्थने बड़े-बड़े व्याख्यान देकर अमेरिका वालोंको चकित कर दिया। बात यह थी कि उनका समझानेका ढङ्ग निराला और सहज था, जिसे अमेरिकावाले बड़ी आसानीसे ग्रहण कर लेते थें। अमेरिका वालोंको धर्मके इस नये रूपमें विशेषता मालूम हुई इसलिये उन्होंने इसका बड़ा मान और आदर किया।

शिष्य—अभी-अभी जो बातें आपने बतलायी हैं क्या उनके अलावा और भी कुछ ऐसे विषय थे जिनपर वे व्याख्यान देते थे।

गुरु—विषय तो बहुत थे, पर खास करके उनके व्याख्यानोंके विषय इस प्रकार हुआ करते थे—

(१) आप क्या हैं ? (२) सुखका इतिहास और उसका घर (३) पापका निदान, कारण और उसकी चिकित्सा। (४) प्रकाश (५) स्व—विस्तार (६) प्रकाशोंका सार। (७) वास्तविकता और आदर्शका सम्मिलन। (८) प्रेमसे ईश्वर प्राप्ति। (९) क्रियात्मक वेदान्त और (१०) भारत। इनमें और सब विषय तो ज्ञान सम्बन्धी हैं। परन्तु भारत पर वे अमेरिकावालोंको यहांकी उस समयका असली हाल बतलानेके लिये बोला करते थे।

शिष्य—जब वे धर्मका उपदेश देते थे तो उसमें भारतका असली हाल बयान करनेकी क्या जरूरत पड़ती थी ?

गुरु—बात यह थी कि जैसा कि तुम्हें पहले बतला आया हूँ उस समय अमेरिकामें हिन्दुस्तानके बारेमें पादरियोंने बहुत झूठी-मूठी अफवाहें फैला रक्खी थीं। स्वामी रामतीर्थ धर्मोपदेशक होनेके साथ ही देशभक्त भी

थे, इसलिये अपने देशकी बदनामी उनसे नहीं सही गयी और उन्होंने वहां वालोंको हिन्दुस्तानका सच्चा हाल बतलाया।

शिष्य—स्वामी रामतीर्थ केवल अमेरिका ही गये थे या और भी किसी देशको ?

गुरु—उन्होंने बहुतसे देशोंमें भ्रमण किया था। अमेरिका जाते हुए जापानमें तो ठहरे ही थे। जिस समय ये मिश्रमें गये तो वहांके मुसलमानोंने इनका बड़ा स्वागत किया और वहांकी एक बड़ी मसजिदमें इनका फारसीमें भाषण हुआ। दूसरे दिन वहांके समाचारपत्रोंने स्वामीजी को हिन्दू-बुद्धिका एक आदर्श पुंज लिखा। टोकियो (जापान) विश्वविद्यालयके संस्कृतके प्रोफेसर ताकाकुत्सु नामक जापानी विद्वान्ने कहा था कि ऐसा दार्शनिक पुरुष मैंने अपने जीवन गरमें नहीं देखा।

शिष्य—गुरुजी, क्या स्वामी रामतीर्थने कोई नया मत या नयी सभा-सोसाइटी भी अपने नामपर चलाई या कायम की थी ?

गुरु—नहीं, उन्होंने अपना कोई नया मत नहीं

चलाया। जब वे अमेरिकासे लौटकर भारतमें आये, तो उनके एक भक्तने मथुरामें कहा था कि महाराज आप अपने ज्ञानकी कोई सोसाइटी स्थापित करें। इसपर स्वामीजीने कहा कि भारतमें जितनी सभा-सोसाइटियां चल रही हैं सब 'राम' की ही तो हैं—राम उन्हींके द्वारा काम करेगा। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पार्सी, सिक्ख और आर्यसमाजी सब मेरी 'भारतभूमि' का अन्न-जल खानेवाले मेरे भाई हैं मेरा सबपर एक-सा प्रेम है।

शिष्य—स्वामीजीने अमेरिकामें कितने दिनों तक प्रचार किया जो उनका नाम इतना प्रसिद्ध हो गया?

गुरु—वे वहां ठहरे तो लगभग दो वर्ष थे, पर उनका प्रेमपूर्ण स्वभाव ऐसा जादू भरा था कि हजारों आदमियोंको उनसे बड़ा प्रेम हो गया। वे बड़े रूपवान भी थे। उनके चेहरे पर सदा प्रसन्नता और मस्ती झलकती थी। जीवन भर कभी किसीने उन्हें उदास नहीं देखा। यही कारण था कि वे जिस वायुमण्डलमें रहते थे, वहां आनन्दकी नदियां उमड़ती थीं—आस पास वाले प्रसन्नतासे गद्गद हो जाते थे, लोग उनके एक-एक शब्द

सुननेको लालायित रहते थे। जिस समय ये अमेरिकासे विदा लेकर भारत आने लगे तो वहाँके निवासियोंने बड़ी धूमधामसे इन्हें विदा किया उस समय इनकी विदाईके सम्बन्धमें जो अंग्रेजी पद्य रचे गये थे उनसे वहां वालोंका स्वामीजी पर अतुल स्नेह प्रकट होता है।

---

[३]

शिष्य—क्या स्वामी रामतीर्थ योगका भी अभ्यास करते थे ? उन्हें भगवान्के दर्शन हुए थे या नहीं ?

गुरु—योगी तो वे थे ही योगका तो अर्थ ही है भगवानसे मिलना (योग) और उन्हें तो प्रतिक्षण भगवानके दर्शन होते थे क्योंकि वे संसारकी सारी चीजोंमें ईश्वरको देखते थे। वे ईश्वरीय ज्ञानसे ऐसे मुग्ध और विह्वल हो जाते थे कि हठात् उनकी आंखोंसे आंसू बहने लगते थे। संन्यास लेनेके पहले जब वे सनातनधर्म सभाओंमें ‘कृष्णकी भक्ति’ पर व्याख्यान देने लगते थे तो लोग उनकी लवलीनता देखकर तन्मय हो जाते थे। वे कहा करते थे कि अनेक वार उन्होंने ‘कालीनाग पर

सवार वंसी बजाते' हुए घनश्याम कृष्णाके दर्शन प्रत्यक्ष किये हैं। उनका कहना था कि भक्तिकी एक ऐसी अवस्था आ जाती है जब काल्पनिक रूप साकार दिखने लगता है। किन्तु ध्यान और प्रेमके बलसे ही ऐसा हो सकता है।

शिष्य—उनकी विद्यार्थी अवस्थाका भी कुछ वर्णन कीजिये। उस समय उनका जीवन कैसा था ?

गुरु—वास्तवमें स्वामी रामतीर्थ जन्मसे ही संन्यासी थे। विद्यार्थी जीवनमें वे बड़ा कष्टमय जीवन बिताते थे। उनका रहन-सहन बिल्कुल गरीब विद्यार्थियों का सा था। शारीरिक परिश्रम भी वे बहुत करते थे, पर यह सब कष्ट वे चुपचाप सहते थे। कभी-कभी तो कई दिनों तक बिना कुछ खाये-पिये ही रह जाते थे। थोड़ा बहुत जो कुछ मिल जाता था वही खाकर आधी-आधी रात तक वे अपने गणितके सवालोंको हल करनेमें लगे रहते थे। कभी-कभी तो ऐसा होता था कि सारी रात जागते ही रहते थे। सुबह तक उन्हें नींद ही नहीं आती थी। ऐसा मालूम होता है कि बचपनसे ही यह समझ कर कि उन्हें संन्यास लेना और कठिनाइयोंका जीवन व्यतीत करना है, उन्होंने

कष्ट झेलनेकी आदत डाल ली थी।

शिष्य—गुरुजी, आपने बतलाया कि स्वामी रामतीर्थ गणितके विशेषज्ञ थे। तो क्या गणितके अतिरिक्त उन्हें और विषयोंका भी साधारण ज्ञान था?

गुरु—हां, गणितके तो वे आचार्य थे ही इसके अतिरिक्त वे विज्ञानके भी प्रेमी थे और शौकिया रसायन तथा वनस्पति शास्त्रका भी ज्ञान रखते थे। विज्ञानमें खास करके उन्होंने विकासवादका अच्छा अध्ययन किया था। प्राच्य और पाश्चात्य दोनों ही प्रकारके दर्शनोंमें उनकी अगाध गति थी। उन्होंने जहां शङ्कर, कणाद, कपिल, गौतम, पातंजली, जैमिनी और व्यास आदि भारतीय दर्शनकारोंका विशेष ज्ञान प्राप्त किया था, वहां कैण्ट, हेगल, गेटे, फिरते, स्पिनोजा, कस्ते, स्पेन्सर, डार्विन, हैकेल, टाइण्डल, हक्सले, स्टार, जार्डन और प्रो० जेम्स आदि पाश्चात्य दार्शनिकोंके सिद्धान्तोंसे भी पूर्णतया परिचय प्राप्त किया था। फारसी, अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू और संस्कृत-साहित्यके वे पूर्ण पण्डित थे। सन् १९०६ ई० में उन्होंने वेदोंका अध्ययन किया और थोड़े ही समयके

अध्ययनसे प्रत्येक मन्त्रकी व्याख्या ऐसी पटुताके साथ करने लगे मानो उन्होंने जन्म भर शब्द शास्त्र ही पढ़ा हो। इस प्रकार प्रत्येक विषयमें उनकी अद्भुत क्षमता देखकर लोगोंको बड़ा आश्चर्य होता था।

शिष्य—गुरूजी, स्वामी रामतीर्थ मूर्तिपूजा मानते थे या नहीं ?

गुरू—मानते क्यों नहीं थे। पत्थरकी मूर्ति ही नहीं मानते थे प्रत्युत वे तो अपनी कलम, दावात, पुस्तक, टेबुल आदि निर्जीव चीजोंसे भी बातें करते थे। उनमें बड़ी जबर्दस्त भावुकता थी।

शिष्य—आखिर किस प्रकारकी पूजाकी ओर उनका विशेष झुकाव था ?

गुरू—वे प्रकृतिमें ईश्वरका दर्शन विशेष रूपसे करते थे। पहाड़ों, नदियों, और जंगलोंके प्राकृतिक दृश्यों को देखकर वे नाचने लगते थे, उनका हृदय थिरकने लगता था। इसीलिये तो उन्होंने हिमालयमें भ्रमण किया था और वहां ऐसे-ऐसे स्थानों तक पहुँचे थे, जहां जानेके लिये पहाड़ोंके खास निवासियों तक की हिम्मत नहीं

होती, बर्फीले पहाड़ों और बीहड़ तथा विकट रास्तोंमें से होकर गुजरना उनके लिये बायें हाथका खेल था। यह सब वे अपने प्रकृति प्रेमके कारण ही करते थे। हिमालयमें वे कभी ऐसे मार्गसे भ्रमण नहीं करते थे जिससे अन्य यात्री आ-जा सकें—बिल्कुल ही नया और टेढ़ा रास्ता पकड़ते थे।

शिष्य—उनका शरीरान्त किस प्रकार हुआ था ?

गुरू—उनका शरीरान्त भी प्रकृतिके साथ ही हुआ था। वे जल समाधि लेकर प्रकृतिमें लीन हो गये।

---

[४]

शिष्य—हमें उनके जीवनसे क्या-क्या शिक्षाएं मिलती हैं ?

गुरू—शिक्षाएं तो बहुत कुछ मिलती हैं, पर इस अवस्थामें तुम्हारे लिये उनके विद्यार्थी जीवनका कष्ट सहन सबसे बड़ी शिक्षा देता है। इसी प्रकार दुःख उठा-उठाकर विद्या पढ़ने वालोंने संसारका उद्धार किया है। तुम्हें भी चाहिये कि कष्टोंसे न डरो और विद्या पढ़नेके

पीछे खाना-पीना सोना और आराम करना सब भूल जाओ।

शिष्य—उनके खास-खास उपदेश क्या हैं?

गुरु—उनके उपदेशोंपर तो एक बड़ी पुस्तक ही लिखी जा सकती है पर कुछ बातें जो साधारण लोगोंके लिये हैं यहां लिखी जाती हैं:—

'ईश्वर घट-घटमें व्यापक है—उसे कहीं खोजनेकी जरूरत नहीं—जरूरत अपने आपको पहचाननेकी है।'

लोग स्वामी रामतीर्थसे कहा करते थे कि जब ईश्वर अपने ही अन्दर मौजूद है तो हमें वह मिलता क्यों नहीं। इसपर स्वामीजी एक कहानी सुनाया करते थे जो इस प्रकार है—"पूर्वी हिन्दुस्तानमें किसी समय एक बड़ा पहलवान रहता था। उसने एक नाईसे, जो गोदनेका काम भी करता था, कहा "भाई मैं अपनी भुजाओंपर सिंहकी शकल गुदवाना चाहता हूँ क्योंकि मेरा जन्म सिंह राशिमें हुआ है, इसलिये मैं इसका एक चिन्ह बनवाना चाहता हूँ।" नाईने ज्योंही सूई लेकर गोदना शुरू किया कि पहलवानने कहा,—"ठहरो-ठहरो, क्या करते

हो ?" नाईने कहा,—"शेरकी पूंछ बना रहा हूँ।" असलमें पहलवान सूईका दर्द नहीं सह सका इसलिये एक अनोखा बहाना करके बोला,—क्या तुम्हें मालूम नहीं है कि शौकीन लोग अपने कुत्तों और घोड़ोंकी दुम कटवा दिया करते हैं, इसलिये हम भी बिना दुमका ही शेर गुदवाना चाहते हैं—दुम मत बनाओ।' नाईने कहा "अच्छा दुम न बनाऊंगा—शरीरके और हिस्से तो बनाने दो"—यह कह कर नाईने शेरके कानकी शकल बनानी शुरू की। पहलवानने कहा—"अब किस हिस्सेका चित्र गोद रहे हो।?" नाईने जवाब दिया "कानका।" पहलवानने कहा—"कैसे बेवकूफ नाई हो—तुमने नहीं देखा है, शौकीन लोग अपने कुत्तोंके कान भी कटवा दिया करते हैं—शेरका भी कान कटा होना ही अच्छा होगा—इसलिये इसे मत बनाओ। नाई ठहरा और थोड़ी देर बाद फिर गोदना शुरू किया। फिर पहलवानने पूछा कि "इस बार क्या बनाने जा रहे हो?" नाईने कहा—"कमर" पहलवानने कहा—"कैसे आदमी हो—क्या तुमने यह भी नहीं सुना है कि कवि लोगोंने ऐसे सिंहोंका

ही वर्णन किया है जिनकी कमर बहुत ही पतली या नाम मात्रकी होती है—कमर बनानेकी भी जरूरत नहीं है।" नाईसे अब न रहा गया उसने सूई और रंगकी डिबिया दूर फेंक, पहलवानसे कहा कि मेरे सामनेसे हट जाओ—मैं तुम्हें नहीं गोदूंगा।" यही हाल संसारके लोगोंका है लोग चाहते तो हैं कि उन्हें पल भरमें ब्रह्मज्ञान हो जाय—आधे मिनटमें ही ईश्वरके दर्शन हो जायें, पर उसके लिये जिस तपस्या की जरूरत होती है उसे करनेसे डरते हैं। पहलवान की तरह सूईके दर्दसे तो बचना चाहते हैं और चाहते हैं कि सिंहका चित्र खिंच जाय। ऐसे लोगोंको कभी कुछ भी नहीं मिलता जो चीज तो प्राप्त करना चाहते हैं, पर उसकी कीमत नहीं देना चाहते।

अब थोड़ेसे उनके उपदेश सुनो और हमेशा याद रक्खो।

सफलता की कुञ्जी

(१) "काम" लगातार काम करनेसे सफलता मिलती है।

(२) "त्याग" स्वामीपने का भाव हृदय से निकाल-कर फेंक।

(३) "प्रेम" पड़ोसियों, रिश्तेदारों और अपने में एक ही ब्रह्म समझ कर दुनिया भर को एकही दृष्टि से देखो।

(४) "मन की प्रसन्नता" प्रसन्न रहो, शांत रहो।

(५) "निर्भयता" माया के परदे को फाड़कर सच्ची आत्मा को पहिचानने और उसी में विश्वास रखनेका नाम निर्भयता है।

(६) "आत्मविश्वास" अपने को परमात्मा समझो, इन्द्रियों के दास न बनो, आप सुरक्षित रहोगे।

(७) "पवित्रता" जैसे मनुष्य के विचार होते हैं वैसा मन हो जाता है।

---

[५]

(१) यह देख कर कि सारा भारतवर्ष प्रत्येक भारतवासीमें मौजूद है, प्रत्येक भारत सपूतको समस्त भारतवासीकी सेवामें तत्पर रहना चाहिये।

(२) किसी व्यक्तिगत या स्थानीय धर्मको राष्ट्रीय धर्मसे ऊँचा स्थान न देना चाहिये, उन्हें ठीक प्रमाणसे रखना ही सुख कर है।

(३) राष्ट्रके हितकी वृद्धिके लिये प्रयत्न करना ही देवताओंकी आराधना करना है।

(४) परमात्मा या परमानन्दके अनुभवके लिये आवश्यकता ब्राह्मण भावकी है, अर्थात् राष्ट्रकी उन्नतिके उपाय सोचनेमें अपनी बुद्धि लगा देना चाहिये।

(५) परमानन्दके अनुभवके लिये अपनेमें क्षत्रीय भाव रखनेकी आवश्यकता है, अर्थात् देशके वास्ते प्राण न्योछावर करनेके लिए प्रति क्षण तत्पर रहना चाहिये।

(६) परमात्माके अनुभवार्थ आवश्यकता है अपनेमें सच्चा वैश्य भाव रखनेकी—अर्थात् अपने धनको राष्ट्रकी धरोहर समझने की।

(७) माता शब्द ऐसा है कि जो हिन्दूमात्रके हृदय में गहरा भाव उत्पन्न करता है।

(८) श्रेष्ठ दान जो आप किसी मनुष्यको दे सकते

हैं, वह विद्या वा ज्ञानका दान है। आप किसी मनुष्यको आज भोजन खिला दें तो कल वह फिर उतना ही भूखा हो जायेगा। यदि उसको कोई कला [हुनर] सिखला दें तो आप उसे जीवन पर्य्यन्त अपनी जीविका प्राप्त करनेके योग्य बना देते हैं।

(९) किसी देशका बल छोटे विचारके बड़े आदमियोंसे नहीं, किन्तु बड़े विचारके छोटे आदमियोंसे बढ़ता है।

(१०) विदेशी राजनीतिज्ञोंसे बचनेका एकमात्र उपाय अपने पड़ोसीसे प्रेम करनेके नियमका अपने जीवन में चरितार्थ करना है।

(११) किसी धर्मको इसलिये स्वीकार मत करो कि यह सबसे नया है। सबसे नई चीजें समयकी कसौटीसे न परखी जानेके कारण सर्वथा सर्व-श्रेष्ठ नहीं होतीं।

(१२) किसी धर्मको इसलिए स्वीकार मत करो कि यह राजाओं या रईसों द्वारा प्राप्त हुआ है। राजा और रईसोंमें प्रायः आध्यात्मिक धनका पूरा अभाव रहता है।

(१३) जिस चीजको स्वीकार करो या जिस धर्म पर विश्वास करो, उसकी निजी श्रेष्ठताके कारणसे करो। उसकी स्वयं जांच पड़ताल करो। खूब छान-बीन करके तब स्वीकार करो।

(१४) अपनी स्वतन्त्रताको बुद्ध, ईसा, मुहम्मद या कृष्णके हाथों न वेच डालो।

(१५) जो परदा हमारी आंखोंपर पड़ा हुआ है, उसको फाड़ डालनेका प्रयत्न मात्र ही धर्म है।

(१६) केवल परमात्मा ही सत्य वस्तु है, अन्य सब मिथ्या है।

(१७) प्रार्थनाका अर्थ कुछ शब्दोंका रटना नहीं है। प्रार्थनाका अर्थ परमात्मदेवका मान करना और अनुभव करना है।

(१८) भय और दण्डसे पाप कभी बन्द नहीं होता।

(१९) वही अत्यन्त सुखी और धन्य है, जिसका जीवन निरन्तर स्वार्थ त्यागमें लगा है।

(२०) आप अपने प्रति सच्चे बने रहो, और

संसारके अन्य किसी बातकी ओर ध्यान न दो।

(२१) मनुष्य अपने भाग्यका विधाता आप है।

(२२) जहां प्रेम है वहां न छोटाई है न बड़ाई न ऊंचाई है न निचाई।

(२३) बिना कामनाके कर्म करना ही सर्वोत्तम त्याग अथवा ईश्वराधनाका पर्यायवाचक है।

(२४) त्याग आपके बलको बढ़ा देता है; आपके शक्तियोंका गुणाकर देता है, आपके पराक्रमको दृढ़ [मजबूत] कर देता है, और आपको ईश्वर बना देता है। यह आपकी चिन्ता और भयको हर लेता है और आप निर्भय तथा प्रसन्न चित्त हो जाते हैं।

(२५) त्यागका अर्थ फकीरी नहीं है। बल्कि प्रत्येक पदार्थको पवित्र बनाना है।

(२६) हृदयकी शुद्धताका अर्थ अपनेको सांसारिक पदार्थोंकी आसक्तिसे अलग स्वतन्त्र रखना है। त्यागका अर्थ इससे कम नहीं है।

(२७) सब पापोंसे बचनेका और सब प्रलोभनोंसे ऊपर रहनेका एकमात्र उपाय सत्यके स्वरूपका अनुभव करना है।

(२८) मुझे किसी चीजकी अभिलाषा नहीं। आवश्यकता नहीं, भय नहीं, आशा नहीं, जिम्मेदारी नहीं।

(२९) मैं धर्म-परिवर्तन कराके [या मुरीद बना कर] अनुयायी इकट्ठा करना नहीं चाहता; मैं केवल सत्यमें रहता हूँ [केवल सत्यका आचरण करता हूं।]

(३०) विशाल संसार मेरा घर है, और उपकार करना मेरा धर्म है।

(३१) अधिकार जमानेके भावको छोड़नेमें, वेदान्त के संन्यास-भावको ग्रहण करनेमें ही राष्ट्रों और व्यक्तियों की मुक्ति निर्भर है। इससे इतर और कोई मार्ग नहीं है।

(३२) उन्नतिका वायु-मण्डल सेवा और प्रेम है, हुक्म और मजबूरी नहीं, अर्थात् सेवा और प्रेमसे उन्नति होती है विधि-निषेध भरी आज्ञाओंसे नहीं।

(३३) जो मनुष्य लोगोंका नेता बननेके योग्य होता है वह अपने सहायकोंकी मूर्खता, अपने अनुगामियों के विश्वासघात, मानव-जातिकी अकृतज्ञता और जनताकी गुण-ग्रहण हीनताकी कभी शिकायत नहीं करता।

(३४) सत्यपर आरूढ़ रहो, इस बातसे भयभीत मत हो कि अधिकांश लोग तुम्हारे विरुद्ध हैं।

(३५) दूसरोंकी दृष्टिमें बड़े और भले बननेकी अभिलाषा ही समाजकी बुराई है और सब धर्मोंके लिये विष है।

(३६) सत्यका अनुभव करना विश्वका स्वामी हो जाना है।

(३७) यदि सत्यके लिए आपको अपना शरीर त्यागना पड़े तो त्याग दीजिए। यही अन्तिम है। यही अन्तिम ममता है जो भङ्ग होती है।

(३८) जो दूसरों की सेवा करता है उसी का जीवन सफल है।

(३९) स्वदेशकी सेवा करना सर्वोत्तम सेवा है।

(४०) जो मनुष्य सत्य के स्वरूप को पहचान लेता है वह पाप से बचा रहता है।

(४१) संसार में वही मनुष्य सुखी है जो सब वासनाओं से अलग रहता है।

(४२) तुम अपने प्रति सच्चे रहो। इसकी परवाह

न करो कि संसार के और लोग क्या कर रहे हैं।

(४३) यदि दान देना चाहते हो तो विद्या का दान करो।

(४४) जहां प्रेम है, वहीं स्वर्ग है।

(४५) त्याग दो ! त्याग दो !! भ्रान्तिको [मोह माया को],

जागो ! जागो !! स्वतन्त्र बनो !

मुक्ति ! मुक्ति !! मुक्ति !!!

(४६) आवश्यकता है। सुधारकों की। दूसरोंको सुधारने की नहीं। किन्तु अपने निजके, सुधारनेकी।

विश्व विद्यालयके उपाधिधारियों की नहीं।

किन्तु परिच्छिन्न भाव के विजेताओं की।

आयुः—दिव्यानन्द भरा तारुण्य।

वेतनः—ईश्वरत्व।

शीघ्र निवेदन करो। विश्व नियन्ता से।

अर्थात् अपने ही आत्मा से।

दासोऽहं भरी दीनता से नहीं।

किन्तु निश्चयात्मक निर्णय व अधिकार के साथ।

ॐ ! ॐ !! ॐ !!!

(४७) क्या डरते हो ? किससे डरते हो ?
क्या ईश्वर से ? तो मूर्ख हो ।
क्या मनुष्य से ? तो कायर हो ।
क्या पंचभूतों से ? उनका सामना करो ।
क्या अपने आप से ? तो अपनेको जानों ।
कह दो "अहं ब्राह्मास्मि" [मैं ईश्वर हूं]

—: इति :—

* ओ३म् शांति *